'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार–मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ३ | वाराणसी, मंगलवार, ६ जनवरी, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

सोखड़ा (बड़ोदा) २८-१०-'५८

स्त्रियों का उद्धार स्त्रियों द्वारा ही संभव

"स्त्रियों का उद्धार स्त्रियों के द्वारा ही होनेवाला है, ऐसा आप कहते हैं, पर यह कैसे होगा ?" ऐसा एक सवाल पूछा गया है।

स्त्रियों का उद्धार तो तभी होगा, जब स्त्रियाँ जागेंगी और स्त्रियों में शंकराचार्य जैसी कोई प्रखर ज्ञान-वैराग्य-सम्पन्न भक्तिमान और निष्ठावान स्त्री होगी। दुनिया में अभी तक समाज पर जिन लोगों का प्रभाव हुआ है, वे पुरुष ही हैं। धर्म पर भी उनका प्रभाव हुआ है। इसी तरह जब स्त्रियों का धर्म पर प्रभाव होगा, तभी उनका उद्धार होगा। ऐसा होना बहुत जरूरी है।

स्त्रियों के उद्धारक के रूप में कृष्ण भगवान हो गये हैं। महावीर स्वामी ने भी स्त्रियों के लिए काम किया। गान्धीजी ने भी स्त्रियों के लिए काम किया। अण्णासाहब कर्वे जैसे पुरुष ने भी अपना सारा जीवन इसी काम में लगाया है। स्वामी दयानन्द ने स्त्रियों के लिए बहुत कहा है और किया है। फिर भी स्त्रियों की आज क्या दशा है ? समाज में पुरुषों की अधिक सत्ता है। कारण यही है कि जिन्होंने स्त्रियों के लिए कार्य किया, वे सबके सब पुरुष हैं, इसलिए वे ज्यादा कुछ नहीं कर सके। वह काम स्त्रियों को स्वयं करना होगा, तभी भलीभाँति हो सकेगा। अनुभव का एक सिद्धान्त है कि प्राणी का उद्धार प्राणी के आत्मबल से ही होगा। परमेश्वर की मदद उसीको मिलती है, जो प्राणी स्वयं कोशिश करता है। उसके मन में जब अत्यन्त तीव्रता दीखती है, तभी परमेश्वर भी मदद करता है। तीव्रता न हो, प्रयत्न में तड़पना न हो, तो भक्ति नहीं होती। जब तीव्रता होती है, तब भक्ति होती है और परमेश्वर मदद करता है। किसी भी जीव का उद्धार उस जीव की तीव्र इच्छा से ही होगा। उसकी इच्छा-शक्ति से ही सारा काम बनेगा। यों परमेश्वर तो सबका उद्धारक है ही; परन्तु जो अपने उद्धार के लिए तीव्र इच्छा-शक्ति रखता है, उसीकी वह मदद करता है।

ब्रह्मवादिनी स्त्रियाँ

एक जमाने में स्त्रियों के लिए पूर्ण स्वातन्त्र्य था। पुरुष जैसे ब्रह्मवादी हो गये हैं, उसी तरह स्त्रियाँ भी ब्रह्मवादिनी हो गयी हैं। स्त्रियों के कुछ सूक्त भी वेदों में आते हैं। पहले स्त्रियों को वेदाभ्यास का अधिकार था। अब स्त्रियों को वेदाध्ययन का अधिकार नहीं दिया जाता है, परन्तु वेद में अघ्रणी ऋषि-कन्या का एक सूक्त है। ऐसी ब्रह्मवादिनी स्त्रियाँ हो गयी हैं, जिनके सूक्त भी वेद में बहुत प्रसिद्ध हैं। स्त्रियाँ परमेश्वर के साथ इतनी एकरूप हो गयी थीं कि उनका गौरव करते समय वे कहती हैं कि परमेश्वर की कृति मेरी ही कृति है। उन्होंने गाया था कि सृष्टि के सारे प्राणी मेरे आश्रय में रहते हैं, परन्तु वे जानते नहीं हैं। वे सब मेरा आधार लेकर ही काम करते हैं।

ईश्वर के साथ एकरूप होकर ईश्वर का सारा कर्तृत्व है, ऐसा मानकर वह वर्णन करती है कि "मैं जिनको ऊँचा चढ़ाना चाहती हूँ, उनको चढ़ाती हूँ, जिनको ऋषि बनाना चाहती हूँ, उनको ऋषि बनाती हूँ।" ऐसा कहनेवाली एक स्त्री हो गयी है। परन्तु आज तो स्त्री किसी पुरुष की माता, किसीकी पत्नी, किसीकी कन्या और किसीकी भगिनी के नाते से ही पहचानी जाती है। स्वतन्त्र तौर पर स्त्री की महिमा नहीं गायी जाती है। परन्तु वेद में तो स्त्रियाँ ऐसे वाक्य बोलती हैं कि 'परमेश्वर का कर्तृत्व मेरा कर्तृत्व है।' वे परमेश्वर का रूप लेकर बोलती हैं।

स्त्रियों का डिब्बा पुरुषों के इंजन में जुड़ा

आज ऐसी स्त्रियाँ स्वप्नवत हो गयी हैं। आज किसी स्त्री का प्रभाव समाज पर पड़ता हो, ऐसा नहीं दीखता है। आज उनका स्वतन्त्र व्यक्तित्व ही नहीं रह गया है। आज वे स्वतन्त्र रूप से जीती ही नहीं हैं। इसलिए किसीकी पत्नी, किसीकी बहन के नाते ही उनका परिचय दिया जाता है। आज स्त्रियों को कुछ सुविधाएँ दी जाती हैं। स्कूल में वे अध्यापिका बनती हैं, दफ्तरों में काम करती हैं, कानून से पुत्र की बराबरी का वारसा, हक उन्हें मिलता है। स्कूल में भी वे पढ़ सकती हैं। पुरुष के साथ बराबरी से काम कर सकती हैं। आज तो सिगरेट भी पी सकती हैं। इतने सारे अधिकार उन्हें भले ही मिल गये हों, परन्तु इनसे उनका उद्धार नहीं होनेवाला है। उनका उद्धार तभी होगा, जब वे आध्यात्मिक अधिकार प्राप्त कर सकें। यह अधिकार हिन्दू-धर्म में ही नहीं, दूसरे धर्मों में भी, बाइबिल में भी आता है कि स्त्रियों के माथे पर पुरुष और पुरुषों के माथे पर परमेश्वर है। याने स्त्री का सीधा सम्बन्ध परमेश्वर के साथ नहीं है। परंपरा से ही, बीच में एक एजेन्सी लेकर ही स्त्री परमेश्वर के पास पहुँच सकती है। यह बात ख्रिस्ती धर्म में भी है, हिन्दू-धर्म में भी है। हिन्दू-धर्म में

तो पत्नी पति के हाथ से हाथ मिलाती है तो उसके हाथ से भी धार्मिक कार्य हो गया, ऐसा माना जाता है। याने इंजन के साथ डिब्बा जोड़ दिया। अब इंजन जहाँ ले जायगा, वहाँ वह डिब्बा भी जायगा। इस तरह पुरुषों के इंजन के साथ स्त्री का डिब्बा जोड़ दिया गया है। डिब्बे में चाहे अमरूद, केले, अंगूर भरे हों और इंजन में चाहे कोयला हो तो भी इंजन तो इंजन ही है। वह डिब्बे को अपनी गति के साथ खींचता है और इंजन की गति के आधार पर ही डिब्बे की गति निश्चित होती है। इस तरह कोई स्त्री गांधी के साथ, कोई कृष्ण के साथ जोड़ी जाती है और उसे सद्गति मिलती है। स्वतन्त्र गति उसे नहीं है। उसकी गति दूसरे पर ही अवलम्बित है।

स्त्रियों का उद्धार कब हो सकेगा ?

अभी तो स्त्रियों को मतदान का अधिकार मिला है, पर उसमें भी बहुत सी स्त्रियाँ अपने पति से पूछकर वोट देती हैं। यह अधिकार उन्होंने खुद नहीं लिया है, यह उन्हें मिला हुआ है। दूसरे देशों में स्त्रियों को इस तरह अधिकार नहीं हैं। इसलिए यह दिया हुआ नहीं, मिला हुआ अधिकार है। परन्तु अधिकार तो प्राप्त करना होता है। इसलिए स्त्रियों को भले ही मतदान का अधिकार मिला हो, पर उससे अधिकार नहीं मिलता। यह मेरा अधिकार है और इससे मैं कुछ कर सकती हूँ, ऐसा भास भी उन्हें नहीं होता। स्त्रियाँ जब निष्ठावान बनेंगी और आध्यात्मिकता से संपन्न बनेंगी, शास्त्र में स्त्री-पुरुष का कोई भेद नहीं होगा। वे जब ऐसा नया शास्त्र बनायेंगी, तब मानव-धर्म का ही उद्धार होगा। आज तो शास्त्र बनानेवाले शंकराचार्य, बादरायण आदि पुरुष ही दीखते हैं, परन्तु ऐसा परिवर्तन करनेवाली जब स्त्री निकलेगी और वह मानवता का शास्त्र रचेगी, तब स्त्री का और मानवता का—दोनों का उद्धार होगा।

सर्वोदय-समाज-रचना में स्त्रियाँ

बहनों ने दूसरा सवाल यह पूछा है कि "सर्वोदय-समाज की रचना में स्त्रियाँ क्या मदद कर सकती हैं ?"

सर्वोदय-समाज की रचना में बहनें बहुत कुछ कर सकती हैं और उनकी मदद की बहुत बड़ी जरूरत है। अभी समाज की जो रचना है, वह सर्वनाश की रचना है और वह पुरुषों ने अपनी बुद्धि से बनायी है। इन पचीस सालों में दो बड़े-बड़े विश्व-युद्ध हुए हैं। इसलिए अब स्त्रियों को आगेआ ना चाहिए और अपना अधिकार जमाना चाहिए। देश का रक्षण और नियंत्रण, ऐसे दोनों अधिकार उन्हें लेने चाहिए, क्योंकि पुरुषों ने जो रचना की है, उसका आधार भय है, अभय नहीं। इसी कारण दो महायुद्ध हो चुके हैं और अब तीसरे का भय छाया हुआ है। आज पुरुष की बुद्धि ने सर्वनाश की योजना बनायी है। स्त्रियों को उसके बीच पड़कर समाज के रक्षण और नियंत्रण के अधिकार अपने हाथ में लेने चाहिए, तभी सर्वोदय होगा। ऐसे सर्वोदय में स्त्रियों का जो दान होगा, वह पुरुषों के दान से अधिक ही होगा। पुरुष आज तक भय पर ही सारी रचना करते आये हैं, अभय पर नहीं। समाज-व्यवस्था के लिए पुरुषों ने मर्यादा बनायी और स्वयं ही तोड़ भी डाली है। सारी दुनिया को आग लगाना वे जानते थे। इस स्थिति को सुधारने के लिए स्त्रियों को आगे आना चाहिए।

स्त्रियाँ ही सर्वोदय ला सकती हैं

भक्ति-मार्ग में ऐसा आदेश है कि जो प्रार्थना करनी है, वह दूसरे के लिए नहीं, अपनी ही चित्त-शुद्धि के लिए करनी चाहिए। परन्तु यह मर्यादा मैं भी तोड़ता हूँ और प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि "हे प्रभो, आइक और क्रुश्चेव जैसे लोगों को तुम सद्बुद्धि दो। मुझे तुम सद्बुद्धि नहीं दोगे तो दुनिया का कुछ बिगड़नेवाला नहीं है, पर उन लोगों में सारी दुनिया को आग लगाने की शक्ति है, इसलिए उन्हें अवश्य ही सद्बुद्धि दो।" आज दिन-ब-दिन नयी-नयी सत्ता की रचना हो रही है और नयी-नयी समस्याएँ खड़ी होती हैं, भय निर्माण होता है और समस्याओं का हल नहीं मिलता। ऐसी स्थिति में सर्वोदय लाना है तो स्त्री ही उसे ला सकती है।

संस्कृत में धृति, मेधा, क्षमा, कीर्ति, वाणी, भक्ति, मुक्ति और बुद्धि—ये सारे शब्द स्त्रीलिंगी हैं। बोध शब्द पुल्लिंगी है, परन्तु वह भी बुद्धि का ही परिणाम है। बुद्धि माता है और बोध उसका बालक है, इसलिए स्त्रियों से ही सर्वोदय-रचना की आशा रख सकते हैं, क्योंकि मातृशक्ति रक्षक देवता है। पुरुष जब हिंसा-शक्ति का आवाहन करते हैं, तब स्त्री उसे रूप देती है। 'उत्तर मां अंबा मां, पूरब मां काली मां।' काली और दुर्गा के रूप में संहारिणी शक्ति की कल्पना है। इसलिए अब स्त्रियों को समाज की बागडोर अपने हाथ में लेनी चाहिए।

स्त्रियाँ समता की बात में फँसेंगी तो भयंकर होगा। 'स्त्री पुरुष की बराबरी में है' इससे ज्यादा अपमानजनक उक्ति दूसरी क्या हो सकती है ? आज तो पश्चिम में स्त्रियों की पलटनें भी होती हैं और स्त्रियाँ हाथ में बन्दूक लेकर कवायद भी करती हैं। परन्तु ऐसे भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए। मनु की यह बात याद रखनी चाहिए कि 'एक हजार पिता से एक माता का गौरव अधिक है।' अभी तो पुरुषों ने स्त्रियों को अत्याचार का साधन बना रखा है। मातृत्व का रूपान्तर व्यभिचार में हुआ है। हिंसा और व्यभिचार का मुकाबला करने के लिए स्त्रियों को आगे आना चाहिए। मातृत्व ब्रम्हचर्य में होता है, इसलिए ब्रम्हचर्य की शक्ति का विकास स्त्रियों को करना चाहिए। तभी मातृत्व की पवित्रता सिद्ध होगी और समाज की रक्षा होगी। वे आगे आयेंगी तो सर्वोदय होगा।

राजनीति और स्त्रियाँ

स्त्रियों ने तीसरा सवाल पूछा है कि "स्त्रियों को राजनीति में भाग लेना चाहिए या नहीं ?"

स्त्रियों को राजनीति में उदासीन नहीं रहना चाहिए। उन्हें तो राजनीति को तोड़ने की राजनीति हाथ में लेनी चाहिए। हमें तो लोकनीति की स्थापना करनी है, इसलिए हमारे समाज में स्त्रियों को आगे आना चाहिए। हमें पक्षमुक्त समाज बनाना है। फिर भले ही कोई पुरुष कांग्रेस में जाय, कोई पी० एस० पी० में जाय, कोई कम्युनिस्ट पक्ष में जाय, स्त्रियों को ऐसा निश्चय करना चाहिए कि हम पक्षमुक्त रहेंगी, पक्ष में पड़ने की कोई जरूरत हमें नहीं है। मत देने का जो अधिकार है, वह तो अच्छा ही है। वे अच्छे मनुष्य को चुपचाप मत देकर उसे सार्थक बना सकती हैं। वह तो गुप्त गायत्री मंत्र जैसा है, इसलिए अपना मत जिसे देना है, यह किसीसे कहना नहीं है। किसी भी पक्ष में आपको दाखिल नहीं होना चाहिए। एक बाजू में तीस और दूसरी बाजू में सत्तर, ऐसी कल्पना मातृत्व के खिलाफ है। मातृ-शक्ति में ऐसे टुकड़े नहीं आते हैं, क्योंकि माता तो सबका हित देखती है। एक जमाने

में लघुमत का राज्य बहुमत पर था, अब आज बहुमत का राज्य लघुमत पर चलता है। यह तो केवल प्रत्याघातरूप है। वास्तव में सबका हित ही स्त्री को देखना चाहिए।

स्त्रियाँ राजनीति का सूक्ष्म अध्ययन करें

मैं तो स्त्रियों को सलाह देता हूँ कि वे राजनीति का सूक्ष्म अध्ययन करें और पुरुषों को राजनीति से मुक्त करने का व्रत धारण करें। राजनीति में क्या-क्या हो रहा है, यह उन्हें बराबर निरीक्षण करते रहना चाहिए। चुनाव पुरुषों के हाथ में नहीं होना चाहिए। वह स्त्रियों के हाथ में होना चाहिए। पुरुषों की चोटी स्त्रियों के हाथ में देनी चाहिए। परन्तु आज स्थिति ऐसी हो गयी है कि पुरुष अब चोटी नहीं रखते हैं और स्त्रियों के बाल लम्बे होते हैं, इसलिए उन्हींकी चोटी पुरुषों के हाथ में रहने का भय है। परन्तु पुरुषों पर स्त्रियों का अंकुश होना चाहिए। स्त्रियों को कहना चाहिए कि खबरदार, वैर, द्वेष आदि फैलाओगे तो नहीं चलेगा। उन्हें स्वयं पक्ष से परे रहना चाहिए और ऐसी कोशिश रहनी चाहिए कि पुरुषों को भी पक्षों से मुक्ति मिले। मेरी यह सलाह स्त्रियाँ अमल में लायेंगी तो हिन्दुस्तान का कलुषित वातावरण निर्मल हो जायगा। किसी भी पक्ष में रहना स्त्री के लिए शोभादायक नहीं है। उसके लिए पक्षातीत रहना ही शोभादायक है, क्योंकि वह मातृशक्ति है। लड़के लड़ेंगे तो माँ किसी एक का पक्ष नहीं लेती है। दोनों को सँभालेगी।

स्त्रियाँ ज्ञान-साधना करें

दूसरी बात यह है कि स्त्रियों को खूब ज्ञानाभ्यास करना चाहिए। कस्तूरबा-स्मारक के काम के बारे में मुझसे पूछा गया था। मैंने कहा था कि यह क्षीण कार्य है। यह पानी सूख जायगा। यह बहता झरना नहीं है। थोड़े शिक्षण से थोड़ी-सी पूँजी लेकर एक-एक गाँव में सेविका काम शुरू करती है, उसकी शादी हो जाती है तो काम छोड़कर चली जाती है या वहाँ काम करती रहती है तो उस छोटी-सी पूँजी पर वह तेजस्वी नहीं बन सकती है और पुरुष-प्रधान समाज में स्वतन्त्र होकर काम करने की शक्ति उसमें नहीं आती है। इसलिए स्त्रियों को ज्ञान में जरा भी पीछे नहीं रहना चाहिए। सरस्वती जैसी ज्ञान में अग्रसर स्त्रियाँ होनी चाहिए। पुरुषों को कम ज्ञान हो तो चलता है। परन्तु स्त्रियों को बहुत सारे काम करने हैं, संस्कृति की रक्षा करनी है, प्रकृति के ऊपर उठना है, इसलिए उन्हें पूरा ज्ञान होना चाहिए। पुरुष प्रकृति से ऊपर उठे, ऐसा भी उन्हें करना है। इसलिए स्त्रियों को पूरा ज्ञान चाहिए। उसके साथ ही भक्ति भी चाहिए। स्त्रियों को भक्ति और ज्ञान दोनों चाहिए। उनका ज्ञान गहरा होना चाहिए। उसके लिए ज्ञान-साधना करनी चाहिए। फिर इस ज्ञान के साथ भक्ति जोड़ी जायगी, तब वे समाज का मार्गदर्शन कर सकेंगी और समाज का विकास हो सकेगा।

सरकारी नौकरी और स्त्रियाँ

एक सवाल है—"स्त्रियों को नौकरी में पड़ना चाहिए कि नहीं और समाज की आर्थिक रचना में स्त्रियों को क्या करना चाहिए?"

यह तो एक बहुत ही दुःखद कहानी है। जैसे यन्त्रों ने ग्रामोद्योग को और परदेशियों ने शहरों के व्यवसाय को तोड़ने का काम किया है और शहरों ने गाँव के उद्योगों को तोड़ने का काम किया है, उसी तरह पुरुषों ने भी स्त्रियों का उद्योग तोड़ने का व्यवस्थित प्रयत्न किया है। वेद में वर्णन आता है कि बुनने का काम स्त्रियाँ ही करती हैं। बुनने का पुल्लिंगी प्रयोग संस्कृत में नहीं है। 'वस्त्राणि पुत्राय मातरो वयन्ति' 'वयन्तिनाम्' याने बुननेवाली। अपने पुत्र के लिए माता वस्त्र बुनती है, ऐसा इसका अर्थ है। परन्तु पुरुषों ने स्त्रियों के हाथ से बुनने का काम ले लिया। स्त्रियाँ अब कांडी भरने का काम करती हैं। कांडी गुम होती है तो पुरुष गुस्सा करता है। एक बुनकर के लिए एक स्त्री पूरी नहीं पड़ती है, इसलिए वह दो-दो, तीन-तीन स्त्रियों को पत्नी बनाता है। आसाम में आज भी स्त्रियाँ बुनती हैं, पर धीरे-धीरे यह धन्धा उनसे छीना जा रहा है।

आश्रम के सरंजाम-कार्यालय में चरखे बनते थे तो उसकी पेटी पर पालिश करने के लिए स्त्रियों को रखा, सुतार सभी पुरुष थे। मैंने पूछा, "यह काम पुरुषों के लिए क्यों रखा है? स्त्रियों के लिए रखना चाहिए। उनमें कला और सुन्दरता का खयाल होता है।" परन्तु उससे तो स्त्रियाँ स्वावलम्बी बनेंगी। इसलिए उन्हें ऐसा ही काम दिया जाता है, जिससे कि वे पुरुषावलम्बी बनें। जो काम स्त्रियों के लिए रखा गया था, वह स्त्रियों से छीन लिया गया, ताकि वे पुरुषावलम्बी बनें।

स्त्रियों के हाथ-पैर में बेड़ियाँ

पुरुषों ने और एक काम किया। उन्होंने स्त्रियों के हाथ-पाँव में बेड़ी डाल दी। उनकी नाक और कान में छेद कर दिया। परमेश्वर अगर ऐसा चाहता तो क्या उसमें यह अक्ल नहीं थी कि नाक में और कान में छेद डालकर ही वह स्त्री को भेजता? परन्तु यह काम पुरुषों ने किया है। उन्होंने उनके हाथ-पाँव में बेड़ी डाल दी है। वह बेड़ी सुवर्ण की है, इसलिए 'बेड़ी' नहीं कहलाती है। लोहे की होती तो उसे 'बेड़ी' कहते। परिणाम यह होता है कि स्त्रियाँ अकेली बाहर नहीं जा सकती हैं और हिम्मत से काम नहीं कर सकती हैं। पुरुष ने स्त्रियों को ऐसा बना दिया है।

* मदालसा मेरे पास पढ़ती थी। उस समय आश्रम और उसके घर के बीच वीरान जंगल था। सुबह उठकर स्नान करके वह आती थी। उस समय नालवाड़ी में आश्रम था। वह पाँच बजे लालटेन लेकर आती थी। उसकी माँ को डर लगता था कि अकेली लड़की जाती है तो खतरा है। क्योंकि वह लड़की है और वह मार्ग ऐसा था कि वहाँ बड़ी शांति रहती थी। तो स्त्रियाँ निर्भय होकर कहीं जा सकती हैं, ऐसी कल्पना नहीं कर सकते हैं। रात में या बड़े तड़के अकेले उन्हें कहीं भेजने में खतरा मानते हैं, क्योंकि उनके शरीर पर गहने रखे जाते हैं। वे गहने अमूल्य होते हैं, इसलिए स्त्रियाँ भी डरती हैं। पुरुषों ने उन्हें अपना बैंक ही बना लिया है। कवि भी इसका गौरव करते हैं। 'स्त्री भीरु है', ऐसा वे गौरवपूर्वक लिखते हैं। भीरु, डरपोक, यह विशेषण स्त्रियों के लिए गौरवास्पद नहीं है। इसमें तो स्त्रियों को अपमान मालूम होना चाहिए।

दमयन्ती के महल का वर्णन मैंने पढ़ा था। उसे पढ़कर मैं तो घबड़ा गया था। दमयन्ती के महल में वायु का प्रवेश नहीं होता था। वायु पुरुष है, इसलिए वह दमयन्ती के महल में कैसे जायगा? मैं इतना घबड़ा गया कि समझ में नहीं आया कि ऐसे महल में कैसे रहा जा सकता है। परन्तु फिर मेरे दिमाग में

* श्रीमती मदालसा अग्रवाल।

आया कि वायु तो पुरुष है, पर शायद हवा जाती होगी, क्योंकि वह स्त्रीलिंगी है।

गाँव की सशक्त महिलाएँ

संस्कृत में स्त्री की बड़ी महिमा गायी गयी है। उसे 'महिला' कहते हैं। महिला याने महान—सामर्थ्यवान-शक्ति-रूपिणी और पुरुष 'देव-भक्ति-पराङ्मुख!' ऐसी स्त्री पुरुष से अधिक सूक्ष्म बुद्धिवाली है। भूखे को भोजन, प्यासे को पानी और जरूरी की वह सेवा करती है, इसलिए स्त्री निश्चय ही श्रेष्ठ है। स्त्री के पास सूक्ष्म शक्ति है, इसीलिए वह बहुत बड़ी शक्ति हो सकती है। इतनी बड़ी शक्ति उसके पास है, ऐसी बात वेद में आती है। इसलिए पुरुषों की खुशामद करने का प्रयत्न स्त्री को नहीं करना चाहिए। पुरुषों ने स्त्रियों का धन्धा छीन लिया है और फिर स्त्रियों को सुविधा दी, याने उन्होंने स्त्री को अपने हाथ में एक कठपुतली बना लिया। उसमें भी जो स्त्री जितनी शिक्षित है, वह उतनी ही पराधीन है। मैंने गाँव में ऐसी स्त्रियाँ देखी हैं, जो अपने पति को उसकी गलती होने पर गाल में तमाचा मारती हैं। ऐसी स्त्री के सामने पति कुछ नहीं कह सकता है। गाँव की स्त्रियाँ अशिक्षित होती हैं तो भी वे काम करती हैं, मेहनत करती हैं। गाँव में मैंने ऐसी साध्वी स्त्रियाँ देखी हैं, जो मेहनत-मजदूरी करती हैं और अपने पति पर धाक जमाती हैं। शिक्षित स्त्री आराम-तलब बनती है। वह रसोई पकाने के लिए, छोटे लड़कों की देख-भाल करने के लिए नौकर रखती है। उसकी आँखें भी इतनी नाजुक बनती हैं कि उसे धुँआ सहन नहीं होता है, इसलिए वह रसोई नहीं बना सकती है।

माता के हाथ की रसोई

भगवान श्रीकृष्ण गुरु के घर पढ़ने गये थे तो छह महीने में उन्होंने पूरी रसोई सीख ली थी। उनके माता-पिता को लगा कि अपना लड़का अशिक्षित ही रह गया है। इसलिए इसे गुरु के घर भेजना चाहिए। उस समय कृष्ण ने कंस को पराजित किया था और कंस की प्रजा को उसके राज्य से मुक्ति दी थी। परन्तु जब वह गुरु के घर गया, तब गुरु को आश्चर्य हुआ कि सारे समाज का उद्धार करनेवाले को मैं क्या पढ़ाऊँ! फिर छह महीने पढ़ाई का नाटक चला। उतना सीखने पर गुरु ने उसका गौरव किया। विदाई के समय कृष्ण ने गुरु की सेवा की। तब गुरु ने कहा कि "अब तू वरदान माँग।" कृष्ण ने कहा कि "मुझे कुछ सूझता नहीं है कि मैं क्या माँगूँ?" गुरु ने कहा कि "तू वरदान माँग, नहीं तो मेरा गौरव नहीं होगा।" तब कृष्ण ने यह वरदान माँगा कि "मुझे जिंदगीभर मातृहस्तेन भोजनम् मिले।" कृष्ण को जिंदगीभर माता के हाथ की रसोई खाने को मिली, ऐसा कहते हैं। अपने हाथ से रसोई बनाकर लड़के को खिलाना, इससे बढ़कर वशीकरण-शक्ति क्या हो सकती है? गांधीजी ने भी आश्रम में हम लोगों को रसोई परोसी है। इससे ज्यादा सेवा दूसरी कोई नहीं हो सकती है। मातृ-वात्सल्य की बड़ी कीमत है। इसलिए मैं तो रसोई की बड़ी कीमत करता हूँ और उसे 'फाइन आर्ट' कहता हूँ। संगीत, चित्र-कला, नृत्य जैसी ललित कलाएँ हैं, वैसी ही रसोई भी ललित कला है। यह कला भी माता की बहुत बड़ी शक्ति हो सकती है। पर आज होटल खुलते हैं तो धीरे-धीरे यह कला भी उनके हाथ से जा रही है। स्त्रियों को टप-टप टायपिस्ट का काम, यांत्रिक काम देते हैं। कहते हैं कि स्त्रियों की उँगलियाँ जल्दी चलती हैं। इस-लिए उन्हें आफिस में बैठाते हैं। यह काम स्त्रियों को नहीं करना चाहिए, ऐसा मैं नहीं कहता हूँ। मेरा कहना यही है कि उन्हें ऐसे काम करने चाहिए, जिनमें स्त्री-शक्ति का विकास हो और शांति की रक्षा हो। जिस धन्धे में पावित्र्य है, शांति है, ऐसा काम करने का आग्रह स्त्रियों को करना चाहिए। इसलिए प्राथमिक शिक्षण स्त्रियों के हाथ में रहना चाहिए। लड़के और लड़कियों का सह-शिक्षण माताओं के हाथ में होना चाहिए। बुनियादी शिक्षण स्त्रियों के हाथ में रहेगा तो बचपन से लड़के पर अच्छा संस्कार पड़ेगा और समाज का उद्धार होगा।

स्त्रियाँ शांति का काम उठायें

मेरी ऐसी इच्छा है कि घर-घर में स्त्रियाँ ऐसी प्रतिज्ञा करें कि हम समाज में अशांति नहीं होने देंगी और हमारे हाथ उस अशांति को बढ़ावा नहीं देंगे। ऐसी प्रतिज्ञा करके उसके चिन्ह के तौर पर वे अपने घर में सर्वोदय-पात्र की स्थापना करें। समाज को हम शांति की राह पर ले जायँगी, स्त्रियों को ऐसी प्रतिज्ञा करनी चाहिए। देशव्यापी शांति-सेना का काम करने के लिए स्त्रियों को आगे आना चाहिए। इसलिए उन्हें राजनीति से मुक्त रहना चाहिए और निष्पक्ष, निर्वैर और निर्भय बनना चाहिए। इसके लिए स्त्रियों को गहरा अध्ययन करना चाहिए और सर्वोदय-विचार का सर्वांङ्गीण विचार करना चाहिए। यह स्त्रियों के लिए मेरी खास प्रार्थना है। मेरी यह इच्छा है कि सर्वोदय-समाज की स्थापना में उनका ही ज्यादा हाथ रहे।

पूँजीपतियों और कम्युनिस्टों से बचने का उपाय : संपत्तिदान

साढ़े सात वर्षों से पैदल चलकर आज यह मुसाफिर, आपका यह भाई आपके पास आ पहुँचा है। लगभग १० मील चलकर आज यह आपके सामने खड़ा है और अभी ३ मील चलकर जाना है। शाम को वढ़वाण में सभा होनेवाली है। आप लोग तो सचमुच जवान हैं, इसलिए मैं मानता हूँ कि शाम को वहाँ अवश्य आयेंगे। फिर भी सन्तोष के लिए एक-दो बात कह देता हूँ। ताकि जो बहुत बूढ़े हों, चल न सकें, उन तक भी थोड़ी बात पहुँच जाय। अभी मैं खास कर जवानों के लिए कुछ न कहूँगा। कारण, आप लोग तो शाम को आयेंगे ही और यही आप लोगों की कसौटी भी होगी। जो शाम को वहाँ आयेगा, वही जवान कहलायेगा और जो नहीं आयेगा, वह बूढ़ा कहलायेगा। इसका उम्र से कोई संबंध नहीं, भले ही वह १५ साल का हो या ७५ साल का। जो वहाँ न आयेगा, वही बूढ़ा माना जायगा।

मैं आज भी बालक

बड़े-बूढ़े लोग पूजनीय माने जाते हैं। लेकिन हमेशा उन्हें ऐसा भास होता है कि नयी पीढ़ीवाले युवक आगे बढ़ रहे हैं। जिस पटरी पर हमारी गाड़ी चलती थी, उसीपर इनकी गाड़ी नहीं चलती। कहीं कुछ गड़बड़ है तो कहीं कुछ। इस तरह उन्हें लगता है कि कुछ-न-कुछ खराबी चल ही रही है, कुछ भय जैसा काम हो रहा है। किन्तु यहाँ मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि आप लोग इन बूढ़ों में मेरी भी गिनती करना

चाहें तो भी नहीं कर सकते। कारण, आप देख ही रहे हैं कि मैं दिन-प्रतिदिन जवान होता जा रहा हूँ। वास्तव में मैं न तो वृद्ध हूँ और न युवक, बल्कि बलवान बालक ही हूँ। आखिर बालक की व्याख्या भी यही है कि 'जो बलवान हो, वह बालक'। इन दिनों मैं बाल-दशा में ही हूँ। खूब पैदल घूमता हूँ। इसलिए आप लोग मेरी गिनती बूढ़ों या जवानों में न कर बालकों में ही करें और इसे बाल-वाणी मान वैसे ही स्नेहपूर्वक सुनें, जैसे कि माँ अपने बच्चे की बोली सुनती है। जो लोग वृद्ध हैं और शाम की सभा में पहुँच नहीं सकते, वे मेरी बात प्रेम से सुनें।

नयी पीढ़ी के बारे में बूढ़ों की शिकायत

वृद्धों को हमेशा जो यह भास होता है कि नया जमाना, नयी पीढ़ी ठीक रास्ते पर नहीं चलती, वह आज की ही नहीं, बहुत पुरानी बात है। तुलसीदास की रामायण में एक प्रसंग आता है। एक समय की बात है, राम और लक्ष्मण एक ओर हो गये और दूसरी ओर परशुराम। परशुराम ने लक्ष्मण को बहुत कुछ खरी-खोटी सुनायी, डराया-धमकाया। फिर भी लक्ष्मण डरा नहीं। उसने परशुराम को साफ-साफ ऐसा जवाब दे डाला, जिसमें कुछ अविनय भी स्पष्ट झलकता है। लक्ष्मण का वह जवाब परशुराम को चिढ़ाने जैसा है और उसे वह राम के सामने देता है। तुलसीदास ने इस प्रसंग का बड़ा ही रसभरा वर्णन उपस्थित किया है। मैं उत्तर हिन्दुस्तान में घूमता था तो वहाँ-के बूढ़े शिकायत किया करते थे कि "ये जवान लोग अब हम लोगों के हाथ में नहीं रहे। ये अनुशासन ही नहीं मानते, हमारी कुछ भी नहीं सुनते।" इस पर मैं हमेशा यही कहा करता कि तब तो आपकी तुलसीकृत रामायण ही जब्त कर देनी चाहिए। जब तक सरकार उसे जब्त करने की हिम्मत नहीं दिखाती, तब तक यह अविनय चलता ही रहेगा और बूढ़ों को उसे सहन भी करना होगा।

नयी पीढ़ी का भी प्रतिनिधित्व मानें

सोचने की बात है कि जब हिंदुस्तान के बड़े-से-बड़े इस धार्मिक ग्रन्थ में, जिसे करोड़ों लोग पढ़ते हैं, परशुराम के प्रति लक्ष्मण की इतनी अविनयपूर्ण वाणी का वर्णन पाया जाता है तो इसमें निश्चय ही बहुत बड़ा रहस्य छिपा हुआ होगा। बात यह थी कि रामजी विष्णु के नये अवतार थे। यों परशुराम भी विष्णु के ही अवतार थे, पर थे पुराने अवतार। लेकिन वह पुराना अवतार विष्णु के नये अवतार को समझ ही न पाया। उसे यह समझ में ही न आया कि अब रामजी का नया अवतार हो गया है, इसलिए अब नयी नीति ही चल पायेगी, हमारी (परशुराम की) पुरानी नीति चल नहीं सकती। यही कारण है कि उसके धमकाने पर लक्ष्मण ने कहा: "यद्यपि मैं छोटा हूँ, फिर भी नयी पीढ़ी का प्रतिनिधि हूँ। अतः यदि आप मुझे पुरानी बातें सुनाकर धमकायें तो भी मैं डर नहीं सकता। मुझे १८-१९ वर्ष का छोकरा न समझकर नयी पीढ़ी का प्रतिनिधि ही मानिये।"

पुरानों द्वारा नयों के तिरस्कार का रहस्य

समझने की बात है कि इस तरह पुरानी पीढ़ी का अवतार नये अवतार का तिरस्कार ही किया करता है। किन्तु जब वह नये अवतार की तेजस्विता देखता है, तभी उसके सामने नत-मस्तक होता है और हाथ जोड़कर एकान्त में चला जाता है। रामायण में श्री तुलसीदासजी ने यह दृश्य बहुत ही सुंदर ढंग से उपस्थित किया है। मैंने देखा है कि जवानों के बारे में जितनी तकरार सुनी जाती है, वे स्वयं वैसे नहीं होते। उनमें एक नया विचार पैदा होता है। वह विचार पुराने मूल्यों को तोड़नेवाला हुआ करता है। जो विचार खराब हैं और जो मूल्य एकांगी प्रतीत होते हैं, नया विचार उन्हें तोड़ ही डालता है।

एकांगी मूल्य बदलने ही चाहिए

पुराने लोग जिन मूल्यों को बहुत ही अच्छा मानते थे, वे अत्यधिक एकांगी थे। एक दृष्टान्त देखिये, यह सोलहो आने सच है कि चोरी पाप है। फिर संग्रह भी पाप है या नहीं? लेकिन संग्रह पाप है, इस बात पर पुराने लोगों ने इतना अधिक जोर कभी नहीं दिया, जितना कि चोरी पर दिया। कोई संग्रह करने-वाला भाई आता है तो उसे 'आइये, बैठिये' कहा जाता है और उसके लिए गद्दी-तकिया तक मँगाया जाता है। किन्तु चोर के आने पर उससे ऐसा नहीं कहा जाता और उसे सीधे जेल का रास्ता दिखाया जाता है। वास्तव में दोनों एक-दूसरे के भाई-भाई कहे जा सकते हैं या बाप-बेटे। फिर भी चोर को जेल की सजा दी जाती है और संग्रहकर्ता को प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। यह बात पुराने लोग भूल जाते हैं और फिर नये लोग आकर कहते हैं, जैसा कि कम्युनिस्ट कहा करते हैं। फिर चोरी करना भी धर्म हो सकता है, जब कि संग्रह करना धर्म माना जाता है। किन्तु यह सुनकर बूढ़े कहने लगते हैं कि 'ये जवान लोग कुछ समझते ही नहीं, उच्छृङ्खल हो गये हैं!'

अपरिग्रह से बचेंगे तो अपहरण सिर पड़ेगा

यदि समाज अपरिग्रह की बात न मानेगा तो अपहरण की बात बलात् उसके सिर पर आ लदेगी। कम्युनिस्टों ने एक नया सिद्धान्त निकाला है कि अपहरण करनेवालों का अपहरण करना समाज का कर्तव्य है, एक नया धर्म है। यह नियम किसी साधारण मनुष्य ने नहीं बनाया। बल्कि महामुनि मार्क्स ने ही इसे आवि-ष्कृत किया है, जो उस युग के एक द्रष्टा रहे। उन्होंने कहा है कि यदि समाज में अपहरण करनेवाला वर्ग बना हुआ हो और उसे मान्यता भी प्राप्त होती हो तो उस मान्यता को मिटाने के लिए अपहरण करनेवाले का अपहरण करना धर्म ही होगा। इसका अर्थ मैं यही मानता हूँ कि आवश्यकता से अधिक संग्रह रखना ठीक नहीं।

मूल्य-परिवर्तन की मिसाल

पुराने जमाने में सबसे बड़ा राजा वही माना जाता था, जिसके अन्तःपुर में अधिक-से-अधिक स्त्रियाँ हों। जरासंध का वध कर उसकी हजारों स्त्रियों को छुड़ाने का वर्णन हम पुराणों में पढ़ते ही हैं। जिसके पास अधिक-से-अधिक स्त्रियाँ हों, वह आदरणीय, पूज्य और महापुरुष माना जाता था। मुसलमान भाई मुझे माफ करें। किन्तु उनके धर्म में यह माना जाता है कि कोई भी चार से अधिक स्त्रियाँ नहीं कर सकता, पर पैगम्बर के लिए यह अप-वाद है। वह चार से अधिक स्त्रियों से भी शादी कर सकता है, क्योंकि वह सबके साथ समता का बर्ताव करने की क्षमता रखता है। लेकिन आज का जमाना यह कभी मान्य नहीं कर सकता कि जितनी अधिक स्त्रियाँ हों, उतनी ही पुरुष की योग्यता भी बढ़ती है। सच पूछिये तो आज एक पत्नी के रहते दूसरी को ब्याह लाने पर मानव समाज से कतराता है। कोई पूछ ही बैठता है तो

बेचारे को अनेक कारण बतलाकर अपनी इज्जत बचानी पड़ती है। रामायण में ही जहाँ दशरथ ने तीन-तीन स्त्रियाँ बनायीं और जिनके करते इतनी बड़ी रामायण हुई, वहीं राम ने एकपत्नी-व्रत का आदर्श उपस्थित कर दिखाया। कारण स्पष्ट है, राम नयी पीढ़ी के जो थे! उनके जमाने में पुराना मूल्य बदल गया। अब ऐसा नहीं माना जाता कि जिसे अधिक स्त्रियाँ हों, उसने बहुत बड़ा काम किया। बल्कि यही माना जाता है कि उसने बहुत निम्न कार्य किया, क्योंकि अब मूल्य बदल गया है। इसी तरह आप देखेंगे कि मूल्य बदलता जा रहा है।

लोभ का शीघ्र नियमन आवश्यक

लोभ की ही बात लीजिये। काम-वासना का नियमन करने के लिए समाज ने सदा के लिए सिद्धान्त बना दिया कि जो जितना ही काम-वासना का नियमन करे, वह उतना ही सत्पुरुष माना जायगा। इससे समाज से तीन-चार स्त्रियोंवाली बात उठ गयी। किन्तु जब तक लोभ का नियमन नहीं होता, तब तक अमुक व्यक्ति करोड़पति होने से समाज में उसकी इज्जत, मान-प्रतिष्ठा अधिक रहेगी ही। लेकिन आज यह अत्यावश्यक हो गया है कि अर्थशास्त्र के बारे में भी लोभ का नियमन शीघ्र किया जाय। यदि यह नहीं होता और समाज में संग्रहकर्ताओं को अधिक मान-सम्मान दिया जाता है तो नयी पीढ़ी के लोगों को हम कुछ भी भला-बुरा नहीं कह सकते। तब 'वे उच्छृङ्खल हो गये हैं, अंकुश में नहीं रहते', यह सब कहने का कोई अर्थ रह जाता।

सारांश, जैसे अस्तेय यानी चोरी न करना एक महासिद्धान्त है, वैसे ही अपरिग्रह भी एक महासिद्धान्त है। लेकिन यदि हम अपरिग्रह संन्यासियों के लिए ही और अस्तेय गृहस्थों के लिए ही मान लें तो समाज की उन्नति कभी नहीं हो सकती। जब तक इस तरह के एकांगी धर्म को अधूरा समझकर उसे पूर्ण नहीं किया जाता, तब तक समाज आगे नहीं बढ़ सकता। इसलिए मैं वृद्ध लोगों से कहता हूँ कि जवानों को सिर्फ दबाने, भला-बुरा कहने से काम न चलेगा तो आगे का काम क्या चलेगा?

कम्युनिस्टों की चुनौती

आज कम्युनिस्ट कहते हैं कि "यह बाबा लोगों को अहिंसा सिखलाने निकला है और समाज में अहिंसा और प्रेम बढ़ाने की बातें करता है। वह समाज को समझाने के लिए निकल पड़ा है और उससे अपरिग्रह की स्थापना की माँग कर रहा है। इसे कुछ प्रयोग करने दिया जाय और देखा जाय कि यह समाज में प्रेम द्वारा अपरिग्रह की स्थापना कैसे कर पाता है? अगर बाबा यह कर सके तो बहुत ही अच्छा होगा और फिर हमें अपहरण का शस्त्र काम में लाने की भी जरूरत न पड़ेगी। लेकिन यदि बाबा का कार्यक्रम फेल हो जाय, तब हम लोगों के लिए रास्ता खुला रहेगा या नहीं?" वे सरे-बाजार पूछते हैं कि "यदि बाबा अपने काम में असफल हो जायँ तो आप हमारे लिए रास्ता खोल देंगे या नहीं?" जब हम इसका उत्तर उन्हें सरे-बाजार और मुँहतोड़ ही देंगे, तभी उनका समाधान होगा। अगर हम यह आशा करें कि गाली-गलौज कर हम उन्हें रोक लेंगे, कम्युनिस्ट वातावरण नष्ट कर देंगे तो वह दुराशा ही सिद्ध होगी। बिना कर्तव्य किये काम चल ही कैसे सकेगा?

प्रेमशक्ति से सब कुछ सम्भव

गत सात-आठ वर्षों से मैं लोगों को यही बात समझा रहा हूँ कि आपके पास जमीन, सम्पत्ति या और भी जो कुछ हो, उसका एक अंश समाज को अर्पण कर दीजिये। इस तरह हर आदमी अंश-दान करेगा तो प्रेमशक्ति से जन-क्रान्ति होगी और शान्ति के साथ बहुत बड़ा काम हो जायगा। फिर न तो कम्युनिस्टों की जरूरत पड़ेगी और न शस्त्र-शक्ति की ही। सब कुछ प्रेम-शक्ति से ही हो जायगा। यह काम इतना आसान है। अगर हम इसे इससे भी आसान बनायें तो वह हास्यास्पद ही होगा।

कम दाम, ज्यादा आराम

आपको अपनी सम्पत्ति का छठा, सातवाँ या आठवाँ हिस्सा समाज के लिए दान करना चाहिए। यह मैं आपके व्यापार में से नहीं माँगता। आपके घर में जो खर्च होता हो, उसीके हिसाब से आप दीजिये। आप कितना कमाते हैं, यह मैं नहीं पूछता और न उसके अनुपात में ही सम्पत्तिदान माँगता हूँ। आपके घर में जितना खर्च होता हो, घर में जितने आदमी हों, उनमें एक मुझे भी मानकर मेरा भाग मुझे दीजिये। मान लीजिये, शादी में सात हजार रुपये खर्चा होता हो तो समाज के नाम एक हजार रुपया निकाल दीजिये और सात सौ खर्च होता हो तो सौ दीजिये। क्या यह अधिक माँग कही जायगी? यदि ऐसा होगा तो हर घर में दरिद्रनारायण को प्रवेश मिलेगा। इस तरह हर परिवार, फिर वह अमीर हो या गरीब, समाज के लिए एक हिस्सा दे। इतनी सीधी-सादी बात मैं गत सात-आठ वर्षों से लोगों के सामने रख रहा हूँ। यह मेरी न्यूनतम माँग है। इसे आप स्वीकार करें तो अहिंसा की शक्ति प्रकट होगी। आज एक ओर से पूँजीवादियों की कंजूसी है तो दूसरी ओर कम्युनिस्टों का अति उत्साहपूर्ण अभिक्रमण। यदि आप यह काम करते हैं तो समाज इस कैंची से मुक्ति पायेगा और विश्व में शान्तिस्थापनार्थ भारत सफल होगा।

पड़ाव: सुरेन्द्रनगर (सौराष्ट्र) दिनांक: ११-१२-'५८

अस्तेय और अपरिग्रह--दोनों अभिन्न

यह पंचमहाल जिला भूदान, ग्रामदान के लिए बहुत अनुकूल क्षेत्र है, इससे ज्यादा अनुकूल क्षेत्र शायद ही दूसरा कोई हो सकता है। यहाँ ठक्कर बापा की तपश्चर्या करीब तीस या चालीस साल से हुई है। ऐसी तपश्चर्या जिस वातावरण में हुई हो, उसका लाभ अगर हम नहीं ले सकते हैं तो यह हमारी कमी कही जायगी। इतना ही नहीं, पर श्रद्धा की भी कमी कही जायगी। प्रतिभा की भी वह कमी होगी। हमारे जो सेवक हैं, उनसे मैं कहना चाहता हूँ कि आप मानसिक संकोच छोड़कर सीधा ग्रामदान ही माँगने के लिए निकलें। हम जायँगे तो शायद ग्रामदान नहीं मिलेगा, ऐसा मानेंगे तो वह ग्रामदान के लिए अच्छा प्रयत्न साबित नहीं होगा। उल्टे वह विघ्न ही साबित होगा।

सुधार-कार्य से क्रान्ति में विघ्न

योगी जब आत्म-दर्शन के लिए ध्यानमग्न होते हैं, तब उन्हें सीधा दर्शन होने के बदले उसके मन को प्रकृतिमाता सिद्धि की ओर ले जाती है। यह सिद्धि भी आत्म-दर्शन का ही एक प्रकार

है, ऐसा समझकर वह सिद्धि से चिपका रहे तो आत्म-दर्शन वहीं खत्म हो जायगा। इसलिए सिद्धि आत्म-दर्शन के मार्ग में विघ्न-रूप होती है। अन्तरायरूप होती है। यह एक बहुत सुन्दर प्रक्रिया योगशास्त्र में आती है। पापकार्य मुक्तिकार्य के लिए विघ्न है, यह तो सब जानते ही हैं। परन्तु पुण्य भी कभी-कभी मुक्ति के मार्ग में भयंकर रूप से खड़ा हो जाता है। क्योंकि लोग पाप को पाप कह सकते हैं, परन्तु जब पुण्य सोज्ज्वल रूप लेकर मनुष्य के सामने खड़ा रहता है, तब जरा भ्रम पैदा होता है। तब उसे हम मुक्ति समझ बैठते हैं। इस तरह साधक की वंचना हो सकती है। कार्ल मार्क्स ने योगशास्त्र की बात जरा दूसरे ढंग से बतायी है। उसने कहा कि यह सुधारवाद क्रान्तिवाद का जानी दुश्मन है। दोनों के चेहरे मिलते हुए दीखते हैं, परन्तु जितना फर्क घोड़े और गधे में होता है, उतना ही अन्तर इन दोनों के बीच में है। क्रान्ति अश्व का दर्शन है और सुधार भारवाही गधे का लक्षण है। कार्ल मार्क्स ने बहुत विलक्षण बातें लोगों के सामने रखी हैं, उसमें एक बात यह भी है कि सुधारवाद मुक्ति के कार्य में याने क्रान्ति-कार्य में विघ्नरूप है। उसके सामने उस समय सामाजिक क्रान्ति थी और योगशास्त्र में मनुष्य की मुक्ति की बात है। ये दो बातें भिन्न लगती हैं, परन्तु दोनों का स्वरूप एक ही है। यह रूप याने अंतिम साध्य प्राप्त करने के लिए सिद्धि विघ्नरूप बनती है। इसी तरह से सुधाररूप कार्य क्रान्ति-कार्य में विघ्नरूप बनता है। स्वराज्य प्राप्त होने के बाद कुछ सुधार आये, पर सारे देश ने अंग्रेजों से कह दिया कि 'हिन्दुस्तान छोड़ दो, चले जाओ!' अगर हिंदुस्तान ने 'क्विट् इण्डिया' नहीं कहा होता तो राष्ट्र में चैतन्य प्रकट न होता। इसी तरह से अब मालिकी को हमें कहना चाहिए कि मालिकी, तू क्विट् कर (छोड़ दे)। मालिकी समुद्र में डूब जा या मर जा, ऐसा कहने की हिम्मत हममें आनी चाहिए। इसमें केवल हिम्मत का सवाल नहीं है। अपने मुख से स्वच्छ, निर्मल शब्द का उच्चारण होना चाहिए। दादाभाई नौरोजी ने हिंदुस्तान के दुःख के निवारण के लिए बहुत प्रयत्न किया और उन्होंने अंग्रेजों के सामने यह दुःख रखा। तब उनको यह श्रद्धा थी, यह विश्वास था कि भला मनुष्य उनका सुनेगा। उनके मन में यह था कि उन लोगों को मालूम हो जायगा तो दुःख का निवारण जरूर करेंगे। उन्होंने एक किताब लिखी है—'पावर्टी एण्ड अनब्रिटिश रूल इन इण्डिया' 'गरीबी और अंग्रेजों को शोभा न दे, ऐसा राज्य।' ऐसा कहकर उन्होंने ब्रिटिश राज्य के लिए बड़ा आदर बताया। दादभाई नौरोजी ने श्रद्धा रखकर प्रयत्न किया, पर आखिर उन्होंने देखा कि इससे कुछ नहीं हो रहा है। इसलिए उन्होंने कलकत्ता-कांग्रेस में जाहिर कर दिया कि जब तक स्वराज्य-प्राप्ति नहीं होगी, तब तक हिंदुस्तान के प्रश्न का हल नहीं निकलेगा। उन्होंने 'स्वराज्य' ऐसे स्वच्छ निर्मल शब्द का उच्चारण कांग्रेस के सामने किया। तब तक तो मॉडरेट लोग भी डरते थे और स्वराज्य से दूसरा कोई अलग नाम लेकर बात करते थे, 'स्वराज्य' याने 'वसाहतवाला स्वराज्य या कुछ सुधारणावाला स्वराज्य' ऐसा अर्थ करते थे। परन्तु 'स्वराज्य' याने क्रान्ति—यह शब्द मन में रखने से डर मालूम होता था। मॉडरेट और दूसरे लोगों का कोई खास झगड़ा नहीं था। दोनों देशभक्त थे। एक का आग्रह था कि शब्द को कम नहीं करना चाहिए तो दूसरा मानता था कि तीव्र शब्द देश को हजम नहीं होंगे। आगे जाकर मॉडरेटों ने भी असहयोग किया।

ग्रामदान की हवा फैलायें

अभी ग्रामदान की भी ऐसी ही स्थिति है। ग्रामदान में जरा भी कम कोशिश नहीं करनी चाहिए, फिर भले ही ग्रामदान एक भी न हो। लोगों के पास सीधी तरह बात बराबर रखनी चाहिए। हिन्दुस्तान के गाँव और शहरों का संकट तब टलेगा, जब भूमि की मालिकी मिटेगी। ऐसी स्पष्ट बात कहने के बदले दूसरी-तीसरी बात रखें और मन में यह समझ लें कि इस तरह धीरे-धीरे ये लोग ग्रामदान की तरफ आने लगेंगे तो मैं कहता हूँ कि धीरे-धीरे आने के बदले बीच का काल ज्यादा जायगा। मान लो कि कल से मैं भी कहने लगूँ कि ग्रामदान तो अंतिम ध्येय है और इसलिए अभी तो भूमि-हीनों को जमीन दो। तो फिर ग्रामदान वातावरण से गया, इसलिए यह काम तो जमीन का है। परन्तु यह होगा हवा से। जमीन इकट्ठी करके यह नहीं होगा। इसलिए चारों तरफ हवा फैलने दो कि ग्रामदान ही रामनाम है। रामनाम लेते हुए किसीके मन में संकोच नहीं होना चाहिए। जिस तरह खुले दिल से रामनाम लेते हैं, उसी तरह बिना संकोच निडर होकर ग्रामदान का नाम लेना चाहिए। प्रह्लाद हिरण्यकश्यपु को कहता है, 'मने वाहलु-वाहलु लागे, दादा रामजीनुं नाम।' मुझे रामजी का नाम बहुत प्रिय है। इसी तरह से हमें बोलना चाहिए। स्वच्छ, निर्मल सत्य हमें लोगों के सामने रखना चाहिए, इसलिए मुझे ऐसा लगता है कि मैं तो इस सत्य का जप करूँगा। भले ही इस जप से भूदान देना बन्द हो जाय। भूदान शुरू किया तो ४०-४२ लाख एकड़ जमीन भी मिली थी और इस जप से भू-दान देना बंद हो जाय और ग्रामदान भी न करें तो मैं नाचने लगूँगा कि बहुत अच्छा हुआ। परमेश्वर ने पहले ही सुझाया है कि क्रांति के लिए शांति और अहिंसा के लिए हर घर से सम्मति मिलनी चाहिए। यह बहुत बड़ा कार्यक्रम है। लोगों को सम्मति मिलेगी तो सेवक खड़े हो सकते हैं और फिर ग्रामदान की बातों का वातावरण तैयार होगा। जिस तरह रात गयी तो सूरज उगनेवाला है, उसी तरह हिन्दुस्तान में ग्रामदान होने की बात की तो ब्रह्मलिखित ही है। क्योंकि हिन्दुस्तान की समस्या का हल इसके बिना नहीं होगा। दूसरे किसी भी तरह से समझौता करें तो भी इसके बिना प्रश्न खत्म नहीं होता। किसी गाँव का ग्रामदान हो तो ग्राम-स्वराज्य की स्थापना होनी चाहिए।

ब्याज से लोकशाही को खतरा

आज एक भाई ने मुझसे पूछा कि "ग्राम-स्वराज्य की सारी जमीन तो गाँवसभा की हो गयी। उस गाँव में मजूरी की शक्ति तो है ही, मजदूर तो हैं ही, परन्तु गाँव को पूँजी की जरूरत पड़े तो यह पूँजी कहाँसे लायेंगे? वे लोग अपने जीवन में श्रम करें और बचायें तो कुछ पूँजी खड़ी कर सकते हैं।" मैंने उनसे कहा कि यह ठीक ही है। ऐसा तो उनको करना ही चाहिए। इसमें कोई शंका नहीं है कि हम परदेश से पूँजी लाकर ग्राम-स्वराज्य नहीं ला सकेंगे। परन्तु गाँव का पैसा लूट-लूटकर आज उस राज्य-संस्था का गाँव के बारे में कोई कर्तव्य है कि नहीं? तो वे भाई कहने लगे कि सरकार ऋण दे सकती है, परन्तु वह ब्याज लेकर ऋण देती है। यह सुनकर मैंने कहा कि बाप अपने लड़के से ब्याज लेता है क्या? सरकार लोगों से ब्याज लेती है तो क्या यह उचित कहा जायगा? ग्रामोद्योग को खड़ा करने के लिए पूँजी चाहिए। जो माल गाँव में पैदा करना है, वह कच्चा

माल भी गाँव में होना चाहिए। सरकार ने भी यह कबूल किया है और पंचवार्षिक योजना में भी यह है। इसके लिए खादी-ग्रामोद्योग कमीशन बना है। फिर भी ऐसे पाप अपने समाज में चलते हैं। ब्याज लेना महापाप है और ब्याज पर अभी तक सब धर्मों ने प्रहार किया। मुहम्मद साहब ने कहा है कि "अरे मूर्खो, तुम क्या चाहते हो? संपत्ति बढ़े, यही चाहते हो न? तो तुम्हारी संपत्ति क्या ब्याज से बढ़ेगी? तुम दान दो न? तब सम्पत्ति बढ़ेगी।" ऐसा उपदेश कुरान ने, मुहम्मद पैगम्बर ने किया है। परन्तु उसका कोई अमल नहीं करते हैं। सारा व्यापार-व्यवहार उसपर चलता है। आखिर काम यह है कि व्यापार को ब्याज से छुड़वाना। परन्तु सरकार ब्याज क्या ले? जनता से ब्यादा पैसा क्यों ले? इसके विरोध में जनता को अपनी आवाज उठानी चाहिए। टॉलस्टॉय ने जमीन की मालिकी को महान अनीति कहा है। वैसे ही जनता से ब्याज लेना महान पाप है, महान अनीति है। जैसे 'अहिंसा परमो धर्मः' कहते हैं, इसी तरह से ब्याज लेना परम अधर्म कहा जायगा। परन्तु हम ऐसे आदी हो गये हैं कि चार पैसे दिये तो भी पूछेंगे कि क्या उसका ब्याज मिलेगा? इस ब्याज से लोकशाही के लिए और अहिंसा के लिए एक खतरा निर्माण हुआ है। ब्याज लोकशाही और अहिंसा का एक शत्रु है। इसलिए उसपर प्रहार करना ही है। जिस तरह जमीन की मालिकी तोड़नी है, उसी तरह से यह भी छोड़ना है।

राष्ट्र-रक्षण के लिए ग्रामदान जरूरी

येलवाल की परिषद् में मैंने कहा था कि ग्रामदान एक सुरक्षा का कदम है। दुनिया में युद्ध कब फूट निकलेगा और अनाज के भाव कब एकदम चढ़ जायँगे, यह नहीं कह सकते। गाँव के लोगों को मजूरी भी नहीं मिलेगी। पिछले महायुद्ध में बंगाल में जैसी हालत हुई थी, उसके लिए उस समय तो हमने अंग्रेजों को जिम्मेदार माना था, परन्तु आज भी वैसा होगा तो इसके लिए जिम्मेदार कौन रहेगा? इसलिए राष्ट्र-रक्षण के लिए भी ग्रामदान जरूरी है। राष्ट्रहित के लिए, राष्ट्र की उन्नति के लिए ग्रामदान की जरूरत है ही। परन्तु रक्षण के लिए उसकी निहायत जरूरत है। आज तो रक्षण के लिए सेना की जरूरत मानी जाती है। परन्तु मैं ऐसा नहीं मानता हूँ। राष्ट्र के रक्षण के लिए ग्रामदान की जरूरत है, यही मैं मानता हूँ और वे लोग भी मानते हैं। गाँव को बिना ब्याज ऋण देना आज शक्य नहीं है। परन्तु ग्राम-पंचायत के लोग जब एक संकल्प करेंगे कि हम गाँव को स्वावलंबी बनायेंगे तो सरकार की अगर ऋण देने की तैयारी हो जायगी तो बगैर ब्याज के ही तैयारी होनी चाहिए, इसमें कोई शक नहीं।

ब्याज महापाप है

ये दोष हमारे खून में हैं। हम एक-दूसरे से पैसा छीनते हैं, तब ऐसा ही करते हैं। सर्व-सेवा-संघ खादीवालों को ऋण देता है या खादीवाले ग्रामोद्योगवालों को ऋण देते हैं तो ऐसा ही होता है। और अब तो ब्याज ही नहीं लेना है। ब्याज की बात उन्होंने निकाल दी है। परन्तु एक संस्था दूसरी संस्था को ऋण दे। वह स्वयं पैसे का उपयोग न कर सके और दूसरी संस्था उस पैसे का उपयोग कर सकती है तो भी उससे ब्याज क्यों ले? दो-तीन रुपया सैकड़े का ब्याज भी बदनामी के लिए क्यों दे? मैं इस सारी कल्पना पर प्रहार करता हूँ और यह कल्पना जब तक नहीं जायगी, क्रान्ति नहीं होगी। किशोरलालभाई ने 'समूली क्रान्ति' नाम की किताब में इन सब बातों का विचार किया है। अप्पासाहब पटवर्धन ने ब्याज पर एक स्वतन्त्र किताब लिखी है, जिसका नाम है, 'ब्याज-बट्टा'। उसमें ब्याज-बट्टे का सख्त निषेध किया है। जिस तरह मालिकी महापाप है, उस तरह ब्याज भी महापाप है। चोरी न करना तब पूर्ण होता है, जब हम संग्रह को भी पाप मानेंगे। परन्तु आज जो मनुष्य संग्रह करता है, उसे पुण्यवान माना जाता है और समाज में उसका मान-सम्मान होता है। पर जो अपने बच्चों को खिला-पिला नहीं सकता है, उनके लिए वह चोरी करता है, उस बेचारे को जेल भेजा जाता है। न्यायाधीश भी उसे सजा करते हैं। विद्वान न्यायाधीश इतनी भी अक्ल नहीं रखता है कि जिसे सजा होती है, उसे जेल में काम मिलता है, खाना मिलता है, नींद भी मिलती है और उसका वजन न घटे, यह भी देखा जाता है। अगर वजन घटे तो उसे दूध पिलाया जाता है। उसे जेल में भेजा जाता है और सजा उसके बीबी-बच्चों को होती है। उसे जेल भेजने की सजा के बजाय दो-तीन एकड़ जमीन दें और कहें कि इसमें तुम मेहनत करो और अपने बच्चों का पालन-पोषण करो तो वह खुशी से रहेगा और चोरी भी नहीं करेगा। यह सारा हमें समझना चाहिए, क्योंकि चोर को सजा देने से सवाल हल नहीं होता।

संग्रही चोर का बाप

हमने जैसे चोरी को पाप माना है, वैसे ही संग्रह को भी पाप मानना चाहिए। आज हमने चोरी को पाप माना है, परन्तु चोरों में से भी महापुरुष हो सकते हैं, पर संग्रहखोरों से महा-पुरुष नहीं हो सकते। यह सत्य कहने के लिए ईसामसीह ने एक कठोर वाक्य कहा था कि "सूई की छेद से ऊँट निकल सकता है, परन्तु श्रीमन्त मनुष्य को प्रभु के दरबार में प्रवेश नहीं मिलनेवाला है।" एक बाजू कहते हैं कि चोरी पाप है, परन्तु दूसरी बाजू से संग्रह भी पाप है, यह नहीं कहते हैं। संग्रहवालों को हम आदर देते हैं और उसके पुत्र को जेल भेजते हैं। संग्रह करनेवाला चोर का बाप ही है। ऐसी एकांगी नीति कभी सफल नहीं होगी। पूर्ण नीति ही सफल हो सकती है। अस्तेय व अपरिग्रह दोनों मिलकर पूर्ण नीति बनती है। जैसे चोरी नहीं करनी चाहिए, वैसे संग्रह भी नहीं करना चाहिए। इस तरह दोनों बाजू से पूर्ण नीति लोगों के सामने आयेगी, तभी धर्म जगेगा, नहीं तो वह जीयेगा नहीं, मिट जायगा। हम लोगों ने जो अधूरी, अस्पष्ट, एकांगी नीति रखी है, वह धर्म को ही खत्म करेगी। आज समाज में धर्म नाममात्र का रह गया है। वास्तव में धर्म रहा नहीं है, क्योंकि हमारे समाज में एकांगी नीति चलती है। अगर हम इस पर सीधा प्रहार नहीं करेंगे तो हम एकांगी ही रह जायँगे। ◆

पड़ाव पीपलोद, दिनांक : २१-१०-'५८

अनुक्रम

१. स्त्रियों का उद्धार···	सोखड़ा	२८ अक्तूबर	१७
२. पूँजीपतियों और···	सुरेन्द्र नगर	११ दिसंबर	२०
३. अस्तेय और अपरिग्रह···	पीपलोद	२१ अक्तूबर	२२

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता : गौलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी